



## जनजातीय समाज और आधुनिक शिक्षा

डॉ. खेमसिंह डहेरिया  
उपाचार्य, हिन्दी विभाग  
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय,  
अमरकंटक (म.प्र.)

मानव जीवन में शिक्षा का महत्व सर्वकालिक और सार्वभौमिक रहा है, किन्तु वर्तमान समाज की विकट एवं जटिल परिस्थितियों में व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की प्रगति का एक मात्र आधार शिक्षा ही है। स्वतंत्रता से पूर्व भारतीय समाज में व्यक्ति की पूरी शिक्षा-दीक्षा पारिवारिक एवं धार्मिक पाठशालाओं में दी जाती थी और यह परम्परागत एवं मौखिक होती थी। आजादी के बाद भारत सरकार ने करोड़ों निरक्षर एवं अंधविश्वासी जनता, जिसमें आदिवासी लोगों की संख्या सर्वाधिक थी, को साक्षर एवं शिक्षित कर एक मजबूत प्रजातांत्रिक, प्रगतिशील समाजवादी समाज की स्थापना के लिए योजनाएँ निर्धारित की। भारतीय संविधान की धारा (41) के अंतर्गत शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रभावी व्यवस्था की उद्घोषणा है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सरकार ने ग्रामों एवं जनजातीय बहुल क्षेत्रों में प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक पाठशालाओं की स्थापना एवं संचालन का विस्तृत एवं महत्वपूर्ण प्रयास किया है। किन्तु अनिवार्य शिक्षा का सरकारी लक्ष्य अब तक प्राप्त नहीं किया जा सका है। जिसके अनेकानेक कारण हैं, और इसी कारण स्वरूप आधुनिक शिक्षा से वंचित होने का परिणाम और समसामयिक सरकार की शिक्षा नीति एवं उसका क्रियान्वयन सम्बन्धी प्रयासों का विशाल एवं विस्तृत फलक आदिवासी जन जीवन में देखा, समझा जा सकता है। आदिवासी समाज में व्याप्त अशिक्षा और तद्जनित समस्याओं का मूल कारण शासन-प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार, गबन, घोटाले और कुप्रबंधन है।

आजादी के बाद आधुनिक शिक्षा और वैज्ञानिक विकास से जुड़ी अनेक प्रक्रियाओं ने आदिवासी जनजीवन को कई प्रकार से प्रभावित किया है। आज प्रतिदिन सैकड़ों की संख्या में जनजातीय जनजीवन को कई प्रकार से प्रभावित किया है। आज प्रतिदिन सैकड़ों की संख्या में जनजातीय युवक-युवतियाँ शिक्षा या रोजगार पाने हेतु नगरों या महानगरों की ओर प्रस्थान कर

रहे हैं और यह संख्या दिन प्रतिदिन अधिकाधिक होती जा रही है। शहरों में रहने और बसने के कारण आदिवासी युवक-युवतियों द्वारा अब अपने युवागृह का सदस्य बनना सम्भव नहीं है। अब इनके लिए युवागृह अर्थहीन या महत्वहीन हो गये हैं।<sup>1</sup>

आधुनिक युग में शिक्षा को उन्नति का मूलाधार माना जाता है। शिक्षा एक ऐसा माध्यम है, जिससे हमारे अज्ञान, अंधकार एवं हमारी समस्याओं को दूर कर सकते हैं। शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति का सर्वांगीण विकास सम्भव है। शिक्षा के द्वारा मनुष्य सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्रों में प्रगति कर सकता है। शिक्षा के प्रचार-प्रसार पर ही किसी भी देश की प्रगति आधारित होती है। आजादी के पश्चात् देश के सामने अज्ञानता तथा पिछड़ेपन जैसी अनेक समस्याएँ विद्यमान थीं, उसका समाधान मात्र शिक्षा के द्वारा ही सम्भव था और सरकार ने इसके लिए भरसक प्रयास किया, किन्तु आर्थिक कठिनाइयों के चलते शिक्षा के क्षेत्र में दलित एवं आदिवासियों के शैक्षिक विकास में अपेक्षाकृत परिणाम सामने नहीं आए। मानव जीवन का आरम्भ ही शिक्षा द्वारा होता है। मानव जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति शिक्षा से ही सम्भव होती है। डॉ. ए.एस. अल्तेकर ने शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि- "शिक्षा प्रकाश और शक्ति का ऐसा स्रोत है, जो हमारी शारीरिक, मानसिक, भौतिक और आध्यात्मिक शक्तियों तथा क्षमताओं का निरंतर एवं सामंजस्य पूर्ण विकास करके हमारे स्वभाव को परिवर्तित करती है और उसे उत्कृष्ट बनाती है।<sup>2</sup> आज आदिवासी लेखक सदियों से दबी हुई अपनी चुप्पी को कविता, कहानी, उपन्यास, पत्रकारिता, आत्मकथा तथा संस्मरण द्वारा तोड़ रहे हैं, यहाँ दलित और स्त्री विमर्शों की तरह आदिवासी साहित्य को लेकर यह सवाल उठता रहा है कि किसके द्वारा लिखे साहित्य को आदिवासी साहित्य कहा जाए। इस सम्बन्ध में रमणिका गुप्ता लिखती हैं- "मैं आदिवासी साहित्य उसी को मानती हूँ जो आदिवासियों ने भोगा और लिखा है, उसे आदिवासी समस्याओं, सांस्कृतिक, राजनैतिक व आर्थिक स्थितियों तथा उनकी जीवन शैली पर आधारित होना होगा, आदिवासियों की अपनी आस्थाओं, मिथकों, लोककथाओं, लोकगीतों, लिजिन्द्रियों व वीरगाथाओं का वाचिक साहित्य बहुत समृद्ध है, आज के समकालीन साहित्यच में भी वे कहानी, कविता, उपन्यास, आत्मकथा, संस्मरण तथा पत्रकारिता में हस्तक्षेप कर रहे हैं, इन सबके बावजूद उनमें धार्मिक कट्टरता व अन्याय नहीं बल्कि सरलता और सहजता है जैसे जो गैर आदिवासी, आदिवासियों पर लिखते हैं, वे आदिवासी समर्थक साहित्य के रचनाकार होते हैं, यही परिभाषा दलित साहित्य के सन्दर्भ में भी लागू होती है, उसे आप सहानुभूति या समर्थन का साहित्य भी कह सकते हैं।" रमणिका जी के अनुसार आदिवासियों की लगभग 600 बोलियाँ हैं और लगभग 90 भाषाओं में साहित्य रचा जा रहा है। आदिवासियों ने अतीत में भारत के लिए जो कुर्बानियाँ दी हैं, मुगलों और अंग्रेजों के विरुद्ध जो आंदोलन किये हैं, उन्हें इतिहास के पन्नों पर नहीं आने दिया गया है, अब वे साहित्य में मात्र अपनी पहचान ही नहीं बना रहे हैं, अपितु अपना इतिहास भी लिख रहे हैं, आज भारत वैश्वीकरण

के दौर में विकास की तमाम ऊँचाइयों को पा लेना चाहता है, पर अपने ही एक समृद्धशाली हिस्से की तरफ उसकी नजर नहीं जा रही है, आज हम जिस पाश्चात्य सभ्यता को आधुनिकता और उत्तर आधुनिकता के नाम पर स्वीकार कर गौरवान्वित महसूस करते हैं, वह आधुनिकता हमारे आदिवासी समाज में सदियों से चली आ रही है, पर उसे हम पिछड़ा मानते हैं, इतना ही नहीं उन्हें हिन्दुस्तानी मानने से भी इंकार कर देते हैं। उनकी सम्पत्ति को हड़प लेना, अभिव्यक्ति की आजादी को छीन लेना, बराबरी का दर्जा न देना, उनके संवैधानिक अधिकारों का हनन करना, यह हमारे विकास की सूची में शामिल हो गया है, ऐसी परिस्थिति में विरोध तो निश्चित था, अब वे अपने मूल्यों, परम्पराओं और सम्पत्ति को बचाने के लिए अपने संवैधानिक अधिकारों का प्रयोग करने लगे हैं, साहित्य का प्रयोग हथियार की तरह करने लगे हैं, इससे उनका आत्मविश्वास जगा है, हीन ग्रंथि से मुक्ति पाने लगे हैं।<sup>3</sup>

गरीबी से त्रस्त मानव अपना जीवन यापन करने के लिए कुछ भी छोड़ने को तैयार रहता है। समाज के अवसरवादी लोग ऐसे अवसरों की ताक में रहते हैं। पिछले कुछ दशकों से ईसाई मिशनरियों द्वारा आदिवासियों के धर्मान्तरण की बात जोर-शोर से उठ रही है। कहा जा रहा है कि ईसाई मिशनरियाँ आदिवासियों को भोजन और कपड़े का लालच देकर उन्हें अपना अनुयायी बनाती हैं। तेजिंदर ने अपने उपन्यास कालापादरी में इस समस्या को बड़ी ही मार्मिकता से उठाया है। जहाँ एक आदिवासी खाखा ईसाई प्रार्थना में शामिल हो जाता है, और कहता है माँ कहती है कि चूँकि चर्च ने तुम्हारे पिता और दादा को रोटी दी थी, काम दिया था और राजा के बेगार से मुक्ति दिलवाई थी, इसलिए तुम्हें अपना पूरा जीवन चर्च की सेवा में बिताना है। यहाँ हम देखते हैं कि आदिवासियों की मदद का कार्य मिशनरियों द्वारा तो किया जाता है, लेकिन उसके मूल में कहीं न कहीं धर्मान्तरण की बात भी छिपी रहती है। सरकार द्वारा भी उन्हें मदद दी जाती है, उसके पीछे कोई-न-कोई कारण अवश्य रहता है। आदिवासी जनता आर्थिक क्षेत्रों में भी संघर्ष और चुनौतियों का सामना कर रही है। भारतीय संविधान ने उनके लिए आरक्षण की व्यवस्था भी की है, परन्तु ये सब मिलकर भी उनके सुधार की कोई ऐसी आधारभूमि नहीं तैयार कर सके, जिसे उनके जीवन के लिए क्रान्तिकारी परिवर्तन कहा जाए। दूसरी तरफ विस्थापन की पीड़ा सहते हुए भटकने वाले आदिवासियों के पीछे सरकारी योजनायें ही जिम्मेदार हैं। जिनका संचालन क्षेत्रीय अमीरों, शोषकों के हाथ में होता है और वह इन लोगों पर मनमाना व्यवहार करते हैं। उनकी इस पीड़ा को निम्नलिखित पंक्तियों में देखा जा सकता है—

हम चाहते रहे संतुलन  
तुम करते रहे असंतुलन  
तोड़ते रहे एकता, मिटाते रहे  
हमारी पहचान

खदेड़ते रहे हमारे ही जंगलों से हमें  
उजाड़ते रहे विकास के नाम पर हमारी बस्तियाँ  
बसाने के नाम पर टेलते रहे हाशिए पर  
अब तुम जाओ  
हम कुछ नहीं बता सकते तुम्हें।<sup>4</sup>

अतः कह सकते हैं कि वर्तमान का आदिवासी जीवन हिन्दी साहित्य का प्रमुख अंग बन चुका है। जहाँ उनके जीवन की छोटी-बड़ी सभी गतिविधियों को स्थान मिल रहा है।

छह-सात दशकों के दौरान आदिवासी रचनाकारों की एक बाल-पॉत अवश्य देखी जा सकती है, जो हिन्दी में कम और अपनी मातृभाषा में ज्यादा सक्षम ढंग से लेखन कर रही है। इन लेखकों ने रचनाशीलता से अपनी-अपनी भाषाओं के साहित्य का विकास तो किया ही है, साथ ही भारतीय साहित्य को भी आदिवासियों ने अपने जीवनानुभवों से लगातार समृद्ध भी किया है जैसे-संथाली आदिवासी साहित्य। भारत को आजाद हुए कई वर्ष हुए हैं, फिर भी जिन लोगों का विकास अभी तक नहीं हुआ ऐसे लोगों में आदिवासी सर्वप्रमुख हैं। यहाँ आदिवासी की इस अलग अस्मिता के लिए कोई जगह नहीं है। क्या आज आदिवासी समाज स्वतंत्र है? आदिवासी समाज वनवासी समाज है। आदिवासी समुदाय के लोग जंगलों में रहकर अपना जीवन बिता रहे हैं, किन्तु उन्हें जंगलों में भी चैन से रहने नहीं दिया जा रहा है। जंगलों की अवैध कटाई से उनका आवास छीन लिया जाता है, झीलों व नदियों को प्रदूषित कर पानी के पीने पर प्रतिबंध लगाया जाता है, फ़ैक्टरियों के गंदे पानी और कचरों से खेतों को बंजर बनाया जाता है, क्या उनकी आजादी यही है?

आदिवासी समाज की ओर एक नजर डालें तो पता चलता है कि आदिवासियों को पहले भी खदेड़ा जाता था और आज भी खदेड़ा जा रहा है। यह खदेड़ना सदियों से चालू है, बस केवल रूप या तरीका बदल गया है। वे उजड़ रहे हैं। जंगल, जल, जमीन इन तीन महत्वपूर्ण मूल अधिकारों से वंचित हो रहे हैं। विडम्बना यह है कि यह सब हो रहा है, उनके विकास या उनकी स्थिति में सुधार के नाम पर। स्वतंत्रता से पहले ही अंग्रेजों ने आदिवासियों के जंगल में प्रवेश पर रोक लगाकर उन्हें वहाँ से ही खदेड़ने की योजना शुरू कर दी थी। इस प्रकार वे जंगल की उपज के सब अधिकारों से भी वंचित कर दिये गये थे। सरकार की ये वन नीतियाँ, वन-प्रबंधन और वन-कानून उसकी स्वार्थपूर्ण तथा छल-बल की अभिरुचियों पर आधारित थीं। आदिवासियों के विकास, उनकी भाषा-संस्कृति तथा उनकी पहचान की रक्षा के लिए केन्द्र में मुख्यतः जमीन है। झारखण्ड हो या छत्तीसगढ़ अथवा अन्य आदिवासी बहुल प्रदेश, वहाँ की गरीब जनता के लिए भूमि का प्रश्न महत्वपूर्ण है।

भाषा और संस्कृति की रक्षा के लिए साहित्यकार नींव के पत्थर होते हैं। जनजातीय समाज में इस अभाव को गंभीरता से महसूस नहीं किया जा सका है, इसलिए यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि जनजातीय संस्कृति और भाषा लुप्त होने के कगार पर पहुँच गई है। हजारों सदियों से आदिवासियों को जंगलों में आदिम जीवन जीने के लिए मजबूर कर सभ्यता से दूर रखने की साजिश भी जारी रही और जारी रहा उनका शोषण। न उनकी संस्कृति को स्वीकार किया गया और न ही हमारी संस्कृति को स्वीकार करने दिया। फलस्वरूप आदिवासी समाज का विकास ठहर-सा गया, सोच का विकास रुक गया और रुक गया उनकी संस्कृति और भाषा का विकास। परम्परा और अंधविश्वास से जुड़ा यह समाज बस जीने की चाह के बल पर कठिन से कठिन परिस्थितियों का अपने श्रम से मुकाबला करता रहा। दीन-दुनिया से बेखबर लेकिन इन सबके बावजूद उसने अपनी पहचान आदिवासी के रूप में कायम रखी। वर्तमान में सबसे बड़ा खतरा अगर आदिवासी जमात को है तो वह उसकी पहचान मिटने को है।<sup>5</sup> आदिवासी साहित्य के रूप से नया विद्रोह दिन-ब-दिन आकार ले रहा है। आदिम भारत के नवनिर्माण का स्वप्नबीज आदिवासी-साहित्य के बहाने अंकुरित हो रहा है। "पहाड़ों की गोद में और कटीली झाड़ियों में बस्ती-बस्ती में जिनके जीवन का हर झण शृंखलाबद्ध हुआ है, यह ऐसे जंगलवासियों को मुक्ति की आशा दिलाने वाला है यह साहित्य।"<sup>6</sup> इस तरह से आदिवासी साहित्य जीवनवादी साहित्य है।

आदिवासी समाज शैक्षणिक दृष्टि से आज स्वाभिमान और आत्मनिर्णय के बल पर अपनी कार्य पद्धति को सँवारता हुआ योग्यता हासिल करता हुआ उदासीनता को त्याग रहा है। सामाजिक परिवर्तन के द्वार आज खुल गए हैं। शिक्षा और योग्यता के कारण वह अन्याय जुल्म और अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाने लगा है। अमानवीयता के कठोर षड्यंत्रों से मुकाबला करता हुआ, आदिवासी जन जीवन सत्ता की भागीदारी के महत्व को भी समझ गया है। वह मात्र मतदाता नहीं नेता की पंक्ति में आज खड़ा हो गया है और मानवीयता की दुहाई देते हुए सभी के कल्याण की कामना कर रहा है।

आदिवासी क्षेत्रों में आज भी शिक्षा के प्रति रुचि पैदा करना नितान्त आवश्यक है। आदिवासी माँ-बाप जागरूकता की कमी के कारण प्रायः अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेजते। फलतः सरकारी प्रयास के बावजूद लक्ष्य की पूर्ति नहीं होती।<sup>7</sup> शिक्षा के प्रति रुचि पैदा करने हेतु इन बातों पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है—

1. स्थानीय समाजसेवी एवं बुद्धिजीवियों का सहयोग।
2. शिक्षकों को दायित्वों से परिचय कराना।
3. शिक्षक-अभिभावकों की बैठक की सुनिश्चितता।

4. शिक्षण पद्धति में परिवर्तन हेतु सुझाव।
5. मातृभाषा के साथ-साथ हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा की प्रारम्भिक जानकारी।
6. शिक्षा के प्रति रुचि पैदा करना।

आज शिक्षा नीति, शैक्षणिक वातावरण एवं शैक्षणिक परिवार में आमूल-चूल परिवर्तन लाने के लिए छात्र, अभिभावक, शिक्षक, शिक्षा पदाधिकारी के बीच सामंजस्य स्थापित करना अत्यावश्यक है, सहयोग की भावना जागृत करना जरूरी है, ताकि बच्चों के जीवन को शैक्षणिक संस्कृति द्वारा संवारा जा सके।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है जनजातीय समाज आज की आधुनिक शिक्षा को आत्मसात करते हुए आगे बढ़ रहा है। चाहे वह हिन्दी हो या अंग्रेजी, चाहे कोई भी क्षेत्र हो, वह आज के समय में सभी के साथ कदम से कदम मिलाकर बढ़ रहा है। हमारी भी जिम्मेदारी बनती है जनजातीय समाज को साथ लेकर चलने की, जिससे यह समाज उन्नति के शिखर को छू सके।

#### संदर्भ-ग्रंथ

1. साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी जन-जीवन, डॉ. श्यामराव राठोड़, मिलिन्द प्रकाशन, हैदराबाद, पृष्ठ-211.
2. एज्युकेशन इन एनसिएंट इंडिया, डॉ. एस.एस. अल्तेकर, पृष्ठ-8 से उद्धृत.
3. आदिवासी केन्द्रित हिन्दी साहित्य, डॉ. ऊषा कीर्ति राणावत, अतुल प्रकाशन, कानपुर, पृष्ठ-260.
4. वही, पृष्ठ-300-301.
5. आदिवासी साहित्य : विविध आयाम, सम्पादक- डॉ. रमेश सम्भाजी कुरे, विकास प्रकाशन कानपुर, प्रथम संस्करण-2013, पृष्ठ-272.
6. आदिवासी साहित्य व कला, 3 नि., पृष्ठ-3.
7. आदिवासी भाषा और शिक्षा, संपादक- रमणिका गुप्ता, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2012, पृष्ठ-105.